मलेरिया पत्रिका

वर्ष 15 अंक 2 जून 2007

मलेरियारोधी माह विशेषांक

राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान
(भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद)

मलेरिया पत्रिका

वर्ष 15 अंक 2 जून 2007

सम्पादक
प्रो. आदित्य प्रसाद दाश

सहायक सम्पादक
श्री यूरगायला श्रीहरि
डॉ. वन्दना शर्मा

प्रकाशन एवं सज्जा
श्री जितेन्द्र कुमार
श्री दानसिंह सोंटियाल
श्रीमती मीनाक्षी भसीन
श्रीमती आरती शर्मा

विषय सूची

1. सम्पादकीय 3

2. कीट विकास नियामक और रोगवाहक नियंत्रण 5

3. प्रासंगिकी 12

- संस्थान की गतिविधियाँ 12
- मलेरिया संबंधी देश-विदेश के समाचार 15
- कविता 19

पाठकों से

समस्त पाठकों से मलेरिया उन्मूलन संबंधी जानकारी, विशेष शोध-पत्र, कविताएँ, लेख, चुटकले, प्रचार वाक्य इत्यादि आमंत्रित किए जाते हैं।

—सम्पादक

पत्रिका में प्रकाशित लेखों से सम्पादक की सहमति/असहमति होना अनिवार्य नहीं है, इसके लिए लेखक स्वयं जिम्मेदार है।

जनहित में प्रकाशित निःशुल्क हिन्दी त्रैमासिक

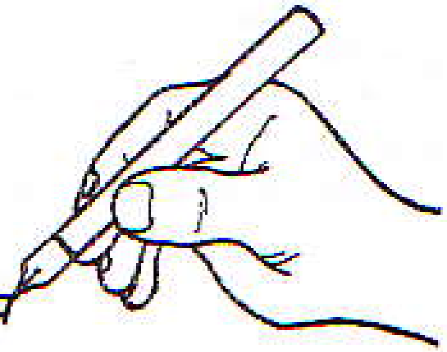

सम्पादकीय

संस्थान की मलेरिया पत्रिका का वर्ष 2007 का द्वितीय अर्थात् जून अंक आपको मलेरियारोधी माह विशेषांक के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। वस्तुतः मानसून पूर्व पत्रिका का यह अंक आपको पुनः मलेरिया रोग के होने की संभावनाओं को कम करने हेतु मलेरियारोधी सावधानियां बरतने की याद दिलाता है। क्योंकि आने वाले मानसून माह में यह रोग अपने पांव पसार लेता है। मलेरिया रोग घातक अवश्य है किन्तु यह लाइलाज नहीं है न ही नियंत्रण से परे है लेकिन इसके बावजूद वह प्रति वर्ष कई लोगों को अपना शिकार बनाता है किन्तु हमें हार न मानकर इसके विरूद्ध निरन्तर प्रयासरत रहना चाहिए। पत्रिका के जून अंक को मलेरियारोधी माह विशेषांक के रूप में प्रस्तुत करने का कारण यह है कि वर्ष 1995 में राष्ट्रीय मलेरियारोधी कार्यक्रम द्वारा मानसून पूर्व अर्थात जून माह को मलेरियारोधी माह के रूप में चुना गया और तभी से मलेरिया के विरूद्ध जागरूकता पैदा करने के उद्देश्य से मलेरियारोधी गतिविधियों का आयोजन किया जाता है ताकि यह रोग जनसामान्य को अपने काल पाश में जकड़ न सके।

यहां यह बताना भी प्रासंगिक होगा कि इस तिमाही के दौरान विश्व के सर्वाधिक मलेरिया जनित क्षेत्र अफ्रीका में प्रति वर्ष की भांति 25 अप्रैल को "अफ्रीका मलेरिया दिवस" के रूप में मनाया गया और इस वर्ष का नारा है "अब अफ्रीका को मलेरिया मुक्त बनाओ"। यह नारा मलेरिया के विरूद्ध छिड़ी जंग में समय को व्यर्थ बर्बाद नहीं करने पर जोर देने के साथ ही शीघ्रातिशीघ्र मलेरिया उन्मूलन की दिशा में प्रयास करने हेतु प्रेरित करता है। वस्तुतः मलेरियारोधी माह और पत्रिका की सार्थकता तभी है जब वैज्ञानिक, सरकारी, गैर-सरकारी संस्थाओं सहित आम आदमी भी इस दिशा में अपना पूरा योगदान अर्थात् सहयोग प्रदान करें।

पत्रिका के इस अंक में, हमने वर्तमान में मलेरियारोधी उपाय संबंधी ज्वलंत विषय "कीट विकास नियामक और रोगवाहक नियंत्रण को लिया है"। यह प्रमुख लेख तकनीकी होते हुए भी अत्यंत सहज एवं सरल भाषा में होने के कारण ज्ञानवर्द्धक और रूचिकर है।

इसके साथ ही हमारे केन्द्र के वैज्ञानिकों द्वारा समय-समय पर संगोष्ठियों, व्याख्यानों और प्रशिक्षण कार्यक्रमों आदि का आयोजन किया जाता है जिसका उद्देश्य मलेरिया के प्रति जनसामान्य से लेकर बुद्धिजीवी वर्ग को जागृत एवं सचेत करना है। पत्रिका में वैज्ञानिकों के इस सक्रिय योगदान को "संस्थान की गतिविधियाँ" शीर्षक के अन्तर्गत स्थान दिया गया है।

आशा है, पत्रिका के इस अंक में दी गई विज्ञानीय जानकारियाँ जनसामान्य के लिए मलेरिया ज्ञान का स्रोत साबित होंगी। हमें हमेशा आपकी प्रतिक्रियाओं एवं सुझावों को जानने की जिज्ञासा रहती है। आशा है आप अपने विचारों, सुझावों एवं मलेरिया संबंधी देश-विदेश के समाचारों से हमें अवश्य अवगत कराएंगे। आपके सुझाव एवं प्रतिक्रियाएं हमारे लिए प्रेरणा का कार्य करेंगी और हमारे व आपके बीच विचार-संप्रेषण का माध्यम बनेंगी।

आदित्य प्रसाद दाश

कीट विकास नियामक और रोगवाहक नियंत्रण

प्रति वर्ष कीट, घोंघा और कृन्तक द्वारा उत्पन्न रोगों के अनेकों मामले सामने आते रहते हैं जो कि सम्पूर्ण विश्व में जनस्वास्थ्य संबंधी बड़े खतरों के द्योतक हैं। अनुमान लगाया जाए तो विश्व में व्याप्त कुल संक्रामक रोगों में से लगभग 17% रोगवाहक जनित रोग हैं। पर्यावरण संबंधी परिवर्तन, कीटनाशक प्रतिरोध क्षमता और बढ़ती हुई आबादी के साथ-साथ वित्तीय एवं आर्थिक समस्याओं ने हाल ही के दशक में इन रोगों को फैलाने में अपना योगदान दिया है। सामान्यतः रोगवाहकों अथवा मध्यस्थ परपोषियों से फैलने वाले विभिन्न रोगों में डेंगू, फाइलेरियासिस, जापानीज़ एन्सेफालिटिस, लीशमैनियासिस, मलेरिया, ऑन्चोसरसियासिस, शिस्टोसोमियासिस और ट्रिपनोसोमियासिस, रोग मुख्य रूप से शामिल हैं। हाल ही में इस बात की पुष्टि हुई है कि अतिसार व रोहा (ट्राकोमा) के संक्रमण में घरेलू मक्खियों की अहम भूमिका है। चाहे ये दोनों रोग अन्य कारणों से भी हुए हों किन्तु शिशु-मृत्यु और अन्धेपन का सबसे बड़ा कारण बने ये रोग दर्शाते हैं कि रोगवाहकों के रूप में घरेलू मक्खियों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

इसके साथ ही मच्छर कई महत्वपूर्ण रोगवाहक जनित रोगों, जैसे मुख्य रूप से मलेरिया, जापानीज़ एन्सेफालिटिस, डेंगू, लसिका संबंधी फाइलेरिया रोग के साथ-साथ पीत ज्वर, वेस्टनाइल फीवर और एन्सेफालिटिस के अन्य रूपों को फैलाने के लिए जिम्मेदार है। यहां यह बताना भी प्रासंगिक होगा कि रासायनिक नियंत्रण नीति का चयन करते समय, लक्षित प्रजातियों की विस्तृत जैविक जानकारी होना जरूरी होता है, चूंकि एक प्रजाति के विरुद्ध कारगर सिद्ध हुए उपाय दूसरी प्रजाति के लिए अनुपयुक्त भी हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त विकर्षकों या कीटनाशक संसिक्त मच्छरदानियों के उपयोग द्वारा मच्छरों के काटने से बचाव तो किया ही जा सकता है।

एनॉफिलीज़ रोगवाहक मच्छर

एनॉफिलीज़ की कुछ प्रजातियाँ ऐसी होती हैं जो मनुष्य को काटना पसन्द करती हैं और यही प्रजातियाँ मलेरिया एवं कुछ क्षेत्रों में लसिका संबंधी फाइलेरिया को फैलाने वाले रोगवाहकों के रूप में कार्य करती हैं। ऐसे क्षेत्रों में जहाँ रोगवाहक अत्यन्त एण्डोफिलिक होते हैं अर्थात् वे घरों के भीतर विश्राम करते हैं, ऐसे रोगवाहकों के संक्रमण को घरों के अंदर अवशिष्ट छिड़काव की सहायता से प्रभावी ढंग से रोका जा सकता है। मुख्य *एनॉफिलीज़* मलेरिया रोगवाहक प्रजातियों के काटने से बचने हेतु कीटनाशक संसिक्त मच्छरदानियों का उपयोग भी अत्यन्त उपयुक्त है। हालांकि ये प्रजातियाँ घरों के भीतर पोषण करती हैं और पोषण उपरान्त वहाँ से चली भी जाती हैं। ऐसे रोगवाहक जो मुख्यतः एक्सोफिलिक होते हैं किन्तु पोषण या विश्राम घरों के भीतर ही करते हैं। इन्हें भी प्रभावशाली ढंग से तेज गंध वाले कीटनाशकों के साथ मिले हुए आंतरिक अवशिष्ट छिड़काव से नियन्त्रित किया जा सकता है। शरणार्थी शिविरों में, तम्बू के आंतरिक भागों में अवशिष्ट कीटनाशकों के छिड़काव से मलेरिया संक्रमण में कमी लाई जा सकती है। ऐसे क्षेत्रों में, जहाँ रोगवाहक अत्यन्त एक्सोफिलिक, या एक्सोफेजिक होते हैं अर्थात् जो अक्सर बाहरी क्षेत्रों में ही काटते एवं विश्राम करते हैं, उनके विरुद्ध व्यक्तिगत सुरक्षा और अन्य उपाय जैसे खुला छिड़काव या डिंभक नियन्त्रण आदि भी अपनाए जा सकते हैं।

रोगवाहक नियन्त्रण कार्यक्रमों के अंतर्गत रासायनिक कीटनाशकों की चार श्रेणियाँ—ऑर्गेनोक्लोरीन्स, ऑर्गेनोफॉस्फेट्स, कार्बामेट्स और पाइरेथ्रॉयड्स अभी भी मुख्य आधार हैं। तथापि, पाइरेथ्रॉयड कीटनाशकों का प्रयोग तो बढ़ गया है किन्तु हाल ही के वर्षों में ऑर्गेनोक्लोरीन्स और कुछ विषैले ऑर्गेनोफॉस्फेट यौगिकों का प्रचलन कम हुआ है। उल्लेखनीय है कि रोगवाहक नियंत्रण कार्यक्रम हेतु डी.डी.टी. के निरन्तर प्रयोग से जैव-प्रदूषकों पर हुए स्टॉकहॉम सम्मेलन के अन्तर्गत विश्व स्वास्थ्य संगठन की सिफारिशों एवं दिशा-निर्देशों के अनुरूप कुछ अनुबंधों के साथ ही अनुमोदित किया गया है और जब स्थानीय रूप से सुरक्षित, प्रभावशाली और सस्ते विकल्प यदि उपलब्ध न हों तभी इनका प्रयोग मान्य है। अनेक रोगवाहक प्रजातियों ने ऑर्गेनोक्लोरीन यौगिकों के प्रति प्रतिरोध क्षमता विकसित कर ली है, और कुछ प्रजातियाँ ऑर्गेनोफॉस्फेट, कार्बामेट और पाइरेथ्रॉयड कीटनाशकों के प्रतिरोधी हैं। कीटनाशक का चुनाव लक्षित रोगवाहक की संवेदनशीलता के मूल्यांकन के आधार पर होना चाहिए। दीर्घकालिक प्रयोग हेतु प्रतिरोध क्षमता की नियमित निगरानी अवश्य होनी चाहिए।

कीटनाशकों जैसे *बेसिल्लस थ्रुइंगिऑसिस इज़्राअलेंसिस* एवं *बी. स्फेरिकस* का प्रयोग सुरक्षित होने के साथ कीट विशेष यौगिकों की माँग को देखते हुए बढ़ा है। यद्यपि इन पदार्थों को जैव कीटनाशक समझा जाता है किन्तु इनका प्रयोग मच्छरों के नियन्त्रण हेतु किया जाता है।

हाल ही के वर्षों में कीट विकास नियामकों का प्रयोग व्यापक स्तर पर होने लगा है। इन यौगिकों को जूवइनाइल हॉर्मोन एनॉलोग जूवइनोइड्स जैसे मेथोप्रीन, पाइरिप्रोक्सीफेन, एपोफेनोनेन, फेनोक्साइकर्ब, हाइड्रोप्रीन, किनोप्रीन, ट्राइप्रीन, जूवइनाइल हॉर्मोन I, जूवइनाइल हॉर्मोन II और जूवइनाइल हार्मोन III में और काइटिन संश्लेषण अवरोधक, उदाहरणार्थ—डाइफ्ल्युबेनज़्युरॉन, ट्राइफ्ल्युम्युरॉन, नोवाल्युरॉन, बिस्ताफ्ल्युरॉन, ब्युप्रोफेज़िन, क्लोरोफ्लआज़ोरन, काइरोमेज़िन, फ्ल्युफेनोक्स्युरॉन, हेक्साफ्ल्युमुरॉन, ल्युफेनयुरॉन, नोयाल्युरॉन, पेनफ्ल्युरॉन, नेफ्ल्युबेनज़्युरॉन में विभाजित किया जा सकता है। जूवइनोएड्स वयस्क मच्छर की अपरिपक्व अवस्था के कायान्तरण प्रक्रिया में हस्तक्षेप करते हैं, जबकि काइटिन संश्लेषण अवरोधक बाहरी त्वचा के निर्माण को रोकते हैं। सामान्यतः ऐसे जूवइनोएड्स जो संवेदनशीलता की सीमित अवधि तक ही कार्य करते हैं, तत्कालीन समग्र डिंभकों के प्रति अधिक सक्रिय नहीं होते हैं जबकि काइटिन संश्लेषण अवरोध का जो बाह्य त्वचा परिवर्तन के समय कार्य करते हैं, वे सामान रूप से समकालीन एवं असमकालीन डिंभकों के लिए प्रभावी होते हैं। यद्यपि कीट विकास नियामक लोक स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाले कीटों के विरुद्ध सक्रिय होते हैं, किन्तु इनका प्रयोग व्यापक रूप से मच्छर रोगवाहकों के विरुद्ध किया गया है। आमतौर पर, ये यौगिक अनेक अलक्षित जीवों के लिए जैसे मछलियां, पक्षी, स्तनधारी जीव और जलीय जन्तुओं के लिए अत्यधिक सुरक्षित होते हैं। इसके अलावा ये मानव जाति के लिए भी अधिक विषैले नहीं होते। फिर भी, कुछ कीट विकास नियामक जलीय क्रसटेशियाई जाति संबंधी और मच्छरों से घनिष्ठ संबंध रखने वाली प्रजातियों पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं जो कि समान आवास स्थल पर वास करती हैं और उनमें कुछ तो मच्छर के डिंभकों का भक्षण करके प्राकृतिक रूप से संतुलित अवस्था में रोगवाहकों की आबादी में कमी लाते हैं।

कीट विकास नियामक (आई.जी.आर.)

कीट विकास नियामक (आई.जी.आर.) ऐसे रसायन होते हैं जो मच्छरों के विकास की डिंभक (लार्वे) अवस्था और अण्डे में कीटों के जीवन-चक्र को भंग करके रोक देते हैं, जैसे हाइड्रोप्रिन और मेथोप्रीन। आई.जी.आर. का प्रयोग करने के पीछे धारणा है कि यदि कोई कीट या मच्छर वयस्क अवस्था तक हो नहीं पहुँच पाएगा, तो उसमें प्रजनन क्षमता नहीं होगी। संक्षेप में, आई.जी.आर. एक प्रकार का कीटों हेतु "संतति रोधक" (बर्थ कंट्रोल) है, जो वर्तमान और भविष्य में उत्पन्न होने वाली कीटों की उत्पत्ति को रोकते हुए अनचाहे कीटों की आबादी में कमी लाने में सहायक होता है। कीट विकास नियामकों का प्रयोग सर्वप्रथम कीट नियंत्रण हेतु सन् 1956 में किया जाने लगा, जब नर सेक्रोपिआ मॉथ हयालोफोरा सेक्रोपिआ (एल) के उदर से जूवइनाइल हॉर्मोन को अलग किया

गया। इस हॉर्मोन के सीमित प्रयोग से कीट की रूपान्तरण एवं वृद्धि करने की प्रक्रिया रुक गई। तथापि सन् 1965 तक इस ओर अधिक ध्यान नहीं दिया गया। तत्पश्चात् "पेपर फेक्टर" की खोज हो जाने से कीट के विकास में जूवइनाइल हॉर्मोन की भूमिका का पता चल पाया।

यहां यह बताना भी समुचित होगा कि चूंकि आई.जी.आर. केवल प्रजनन की समस्या के ही इर्द-गिर्द घूमते हैं, ये वयस्क कीट को नहीं मारते। इसी कारण कीटों की आबादी को अंततः नियन्त्रित करने के उद्देश्य से आई.जी.आर. के साथ कीटनाशक का प्रयोग करना अधिक कारगर होगा क्योंकि इससे एक ओर जहां आई.जी.आर. द्वारा कीटों की प्रजनन क्षमता समाप्त होगी वहीं दूसरी ओर कीटनाशक के प्रयोग से वयस्क कीटों का नियंत्रण होगा।

आई.जी.आर. सामान्य रूप से मक्खियों, चींटियों, खटमलों, मच्छरों, कॉक्रोचों, चीचड़ों और कीटों को नियन्त्रित करने हेतु ही प्रयोग में लाया जाता है। क्रिया-तंत्र के रूप में आई.जी.आर. को ऐसे पदार्थ के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो कीट के भीतर रहकर ही कीट अथवा इसकी सन्तति के सामान्य विकास हेतु आवश्यक शारीरिक नियमन प्रक्रिया को बढ़ाने या रोकने का कार्य इस ढंग से करता है कि उस पदार्थ की क्रिया कीट के जीवन-चक्र पर अनिवार्य रूप से निर्भर हो जाती है। यद्यपि कीट को जीवित बनाए रखने के लिए अनेक प्रकार की आवश्यक शारीरिक क्रियाएं हैं लेकिन इन प्रक्रियाओं को प्रभावित करने वाले रसायन जैसे ऑर्गेनोफॉस्टफेट या कार्बामेट इनमें सम्मिलित नहीं हैं। चूंकि ये रसायन सामान्य विकास को नियंत्रित न करके केवल उससे संबंधित क्रियाओं में हस्तक्षेप करते हैं।

इसका तात्पर्य यह हुआ कि आई.जी.आर. कीटों के लिए विषैला न होकर कीट के जीवन को अनियमित कर अवरूद्ध कर देता है। तथापि, यह जानना भी महत्वपूर्ण होगा कि व्यावहारिक रूप से प्रयुक्त आई.जी.आर. कीटों के विकास की मुख्य प्रक्रिया जैसे प्यूपे से वयस्कों की उत्पत्ति आदि को समाप्त करके तीव्र गति से कीटों की मृत्यु का कारण बनते हैं। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि आई.जी.आर. द्वारा सामान्यतः कीटों की अपरिपक्व अवस्था या प्रजनन अवस्था ही प्रभावित होती है।

आई.जी.आर. के मुख्य यौगिक

मेथोप्रीन

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा पेय जल में प्रयोग हेतु मेथोप्रीन को सुरक्षित माना गया है। इसमें व्याप्त सक्रिय घटक पूर्ण रूप से शीघ्र ही जल में अपघटित हो जाते हैं। लम्बे समय तक अवशिष्ट प्रभावकता पाने के लिए 1.8-8% मेथोप्रीन और विभिन्न सान्द्रणों के कणों से मिला हुआ ब्रिकेट बनाया गया है। ब्रिकेट पात्रों में रुके हुए जल में चार महीने तक मेथोप्रीन को धीरे-धीरे छोड़ते हैं जबकि बहते हुए जल में इनका प्रभाव कम अवधि के लिए होता है। अगर मच्छरों के प्रजनन स्थल सूख जाएं तो ब्रिकेट तभी तक प्रभावशाली रहेगें जब तक दुबारा पानी न आए। बारिश अथवा बाढ़ की संभावना होने पर इनका उपयोग सूखे स्थानों पर मुख्य प्रजनन स्थलों पर किया जा सकता है।

केन्या देश में भूमिगत तालाबों में वर्षा आने के पाँच हफ्ते पूर्व मेथोप्रीन के उपयोग से एक महीने के भीतर मच्छरों के प्रजनन को प्रभावपूर्ण ढंग से नियंत्रित किया गया। प्रजनन स्थलों के ऐसे पूर्व उपचार से मुख्य लाभ यह होता है कि ऐसे स्थानों में भी इनका प्रयोग किया जा सकता है जहाँ बारिश के दिनों में पहुँचना संभव नहीं होता। इनमें मुख्य रूप से खाइयाँ, दलदल, नालियाँ, तालाब और गड्ढे शामिल हैं।

डाईफ्लयुबेनज्यूरॉन

डाईफ्लयुबेनज्यूरॉन का प्रयोग मुख्यतः खुले जल में चाहे स्वच्छ हो या प्रदूषित, विद्यमान मच्छरों के प्रजनन स्थलों पर स्प्रे हेतु किया जाता है। इसका उपयोग खाद्य फसलों के लिए सिंचाई वाले खेतो में उपयुक्त है। इसका प्रभाव एक से दो हफ्ते तक रहता है किन्तु बन्द स्थानों पर जैसे मलकुण्ड या पाखानों में यह एक माह तक प्रभावशाली रहते हैं।

दलदल वाले क्षेत्रों में भी काटने वाले छोटे मच्छरों के नियंत्रण हेतु इनका प्रयोग किया जाता है। सामान्यत: डाईफ्लयुबेनज्यूरॉन गीले पाउडर (25% सक्रिय घटक) या ग्रेन्यूल्स (0.5%) के रूप में उपलब्ध रहता है।

पाइरिप्रोक्सीफेन

पाइरिप्रोक्सीफेन एक प्रकार का जुवइनाइल हॉर्मोन एनॉलोग है और यह अपेक्षाकृत स्थिर रूप से सुगन्धित यौगिक है। यह लक्षित कीट के हॉर्मोन तंत्र पर दबाव डालकर कीटनाशक की तरह कार्य करता है। अन्त में अण्डों की निर्माण प्रक्रिया, ब्रूड केअर एवं अन्य सामाजिक क्रियाओं को प्रभावित करते हुए उनकी वृद्धि को रोक देता है। यह यौगिक 2.5-100 ग्राम सक्रिय घटक प्रति हेक्टर पर सक्रिय होता है। पाइरिप्रोक्सीफेन जनस्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाले कीट जैसे मक्खियाँ और मच्छर के विरुद्ध अधिक कारगर है। ऐसा पता चला है कि पाइरिप्रोक्सीफेन मच्छर के लार्वो के उत्पन्न होने की प्रक्रिया को 95% तक रोक देता है और इनके प्रयोग के लगभग दो माह के उपरान्त भी इनका प्रभाव खत्म नहीं होता। पाइरिप्रोक्सीफेन अनेकों शारीरिक प्रक्रियाओं में जुवइनाइल हॉर्मोन क्रिया का अनुकरण करता है और वयस्क निर्माण, रूपान्तरण व भ्रूण उत्पत्ति प्रक्रियाओं में प्रबल निरोधक है।

आई.जी.आर. और संस्थान की भूमिका

यहां यह विशेष उल्लेखनीय है कि इस दिशा में हमारे संस्थान ने भी भिन्न-भिन्न आई.जी.आर. यौगिकों पर अध्ययन किया है और उन्हीं अध्ययनों में से कुछेक अध्ययनों का संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है:

हिलमिलिन

हिलमिलिन वस्तुत: मच्छरों की अपरिपक्व अवस्थाओं के विरुद्ध प्रयुक्त होने वाला अति प्रभावशाली कीट विकास नियामक है और यह अलक्षित (अन्य) जीवों पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं डालता। हिलमिलिन के सक्रिय घटक, डाईफ्लयुबेनज्यूरॉन की कीटनाशक सक्रियता कीट की बाहरी त्वचा में काइटिन निर्माण में हस्तक्षेप पर आधारित है और इस प्रकार निर्मोचन (मोल्टिंग) की प्रक्रिया को रोकती है।

प्रायोगिक मूल्यांकन के अन्तर्गत हिलमिलिन डब्ल्यू.पी.-25 और 22 एस.एल. मिश्रण को आसविक जल में डुबोकर *एनॉफिलीज क्युलिसिफेसीज, एनॉ. स्टीफेन्सी, एडिज एजिप्टी* और *क्युलेक्स क्विनक्वेफेसिएट्स* के प्रयोगशाला में रखे लार्वो के संपर्क में लाया गया और वयस्क मच्छरों की उत्पत्ति व नियंत्रण पर एक साथ 24 घण्टों के अंतराल में अवलोकन किया गया। प्रत्येक सान्द्रण की चार प्रतिकृतियों की जाँच की गई। विभिन्न अवस्थाओं में डिंभक (लार्वा), प्यूपा, मोजकस और वयस्क मच्छर की अपूर्ण उत्पत्ति को मृत ही माना गया। प्रायोगिक मूल्यांकन के परिणामों ने दर्शाया कि हिलमिलिन मिश्रण जाँच की गई समस्त प्रजातियों के लिए बहुत प्रभावशाली है। फिर भी अपरिपक्व *एनॉफिलीन्स क्युलिसाईन्स* से कहीं अधिक संवेदनशील थे।

इसके तहत *एनॉ. क्युलिसिफेसीज, एनॉ. स्टीफेन्सी* और *क्युलेक्स क्विनक्वेफेसिएट्स* की अपरिपक्व अवस्थाओं के विरुद्ध तालाबों एवं अप्रयुक्त कुंओं में परीक्षण किए गए। हिलमिलिन डब्ल्यू.पी. 25 और हिलमिलिन 22 एस.एल. को क्रमश: 0.003 व 0.005 पी.पी.एम. दर से प्रयोग किया गया। डब्ल्यु.पी. के मिश्रण को जलीय-स्तर पर हाथ से फैलाकर लगाया गया जबकि 22 एस.एल. मिश्रण को स्टिरअप पम्प की सहायता से छिड़का गया। क्षेत्रीय मूल्यांकन के दौरान पता लगा कि हिलमिलिन मिश्रण का प्रभाव मच्छरों के विरुद्ध असंतुलित ही रहा।

एनॉ. क्युलिसिफेसीज में वयस्क मच्छरों की उत्पत्ति एक सप्ताह तक शत-प्रतिशत खत्म हो गई जबकि *एनॉ. स्टीफेन्सी* में यह मात्रा 95 और 93 प्रतिशत रही। मिश्रण का स्थायित्व भी परिवर्तनशील था। *एनॉ. क्युलिसिफेसीज, एनॉ. स्टीफेन्सी* और *क्युलेक्स क्विनक्वेफेसिएट्स* के विरुद्ध औसत अवरोधन प्रतिशत 56 सप्ताह तक डब्ल्यू.पी. 25 प्रति 0.005 पी.पी.एम. के लिए क्रमश: 84.5, 83.16 और

75.16 प्राप्त किया गया जबकि 22 एस.एल. के साथ क्रमश: 94.3, 92.0 और 82.5 था।

डिमिलिन (डाइफ्ल्युवेनज्यूरॉन) मिश्रण का मच्छर नियंत्रण हेतु मूल्यांकन

आई.जी.आर. एवं सामान्यत: प्रयुक्त होने वाले कीटनाशकों में अत्यधिक अंतर है क्योंकि वे अंतस्त्रावी तंत्र की सामान्य क्रियाविधि को बाधित करते हुए लक्षित कीटों के विकास, रूपांतरण और प्रजनन पर अपना प्रभाव डालते हुए उनके कीटनाशी प्रभावों को भी प्रभावित करते हैं। यद्यपि अनेक प्रकार के आई.जी.आर. यौगिकों का प्रयोग मच्छरों को नष्ट करने हेतु किया गया है, केवल दो आई.जी.आर. यौगिक उदाहरणार्थ मेथोप्रीन जुवइनोएड और डाइफ्ल्युवेनज्यूरॉन, काइटिन संश्लेषण रोधक ही जनस्वास्थ्य हेतु उपलब्ध हैं। डिमिलिन (डाइफ्ल्युवेनज्यूरॉन) कीटनाशकों के बेनजोएल्यूरिआ समूह में से एक मुख्य यौगिक है जो मच्छर के लार्वों की निर्मोचन प्रक्रिया की सभी अवस्थाओं को रोकता है। सन् 1984 में विश्व स्वास्थ्य संगठन की विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों और अन्यत्र किए गए प्रायोगिक व क्षेत्रीय परीक्षणों के अच्छे परिणामों और *गम्बुशिया एफिनिस* और *पाइसिलिया रेटिक्युलेटा,* डिंभकनाशी मछलियों को ध्यान में रखते हुए प्रयोगशाला और क्षेत्रीय स्थितियों के अंतर्गत मच्छरों की रोगवाहक प्रजातियों के विरूद्ध डिमिलिन की निश्चित उन्नत संरचना की जैव-प्रभावकता और स्थायित्व का मूल्यांकन करना अपेक्षित था। इसके उद्देश्यों में मुख्यत: प्रयोगशाला में विभिन्न मच्छर प्रजातियों के विरूद्ध डिमिलिन की निश्चित संरचना की प्रभाव क्षमता के मूल्यांकन के साथ विभिन्न जल-निकायों में संरचना के स्थायित्व का मूल्यांकन करना है और मच्छर लार्वा नियंत्रण के लिए डिमिलिन के परिचालन की प्रभावी खुराक और आवृत्ति का मूल्यांकन करना है।

डिमिलिन के प्रायोगिक मूल्यांकन के अन्तर्गत $28 \pm 2^{\circ}$ सै. के तापमान और 70-80% की सापेक्ष आद्रता पर अपरिपक्व मच्छरों की भिन्न प्रजातियों का प्रयोग किया गया। डिमिलिन के 1% भाग के तीन शुद्ध मिश्रण बनाए गए और बाद में आसविक जल से अलग घोल बनाए गए। हर प्रजाति के 25 लार्वों को भिन्न-भिन्न घोलों के संपर्क में लाकर 24 घण्टों के अन्तराल पर वयस्कों के प्रकट होने तक ध्यान से जाँचा गया। लार्वों को दिए जाने वाले भोजन में कुत्तों के बिस्कुट एवं खमीर पाउडर था। अध्ययन के दौरान लार्वों, प्यूपों और वयस्कों की मर्त्यता रिकार्ड की गई और वयस्कों की उत्पत्ति न होने का प्रतिशत भी निर्धारित किया गया।

दिल्ली और आस-पास की जगहों पर इन परीक्षणों हेतु ऐसे स्थलों का चुनाव किया गया जहाँ विशेष प्रजातियों का व्यापक प्रजनन होता था। प्राकृतिक स्थानों पर लार्वों, प्यूपों और वयस्कों की मर्त्यता को जानना संभव न होने के कारण जल पात्रों, जैसे कूलरों, टैंको में टैबलेट या ग्रेनुअल मिश्रण डाला गया और साथ ही बड़े जलाशयों में भी ग्रेनुअल मिश्रण डाले गए।

तीन दिनों के पश्चात् प्रयोगशाला में उपचारित स्थानों से जल के नमूने एकत्रित किए गए और फिर एक सप्ताह के अंतराल में जल के नमूने लाए गए। नियंत्रित स्थितियों में वयस्कों के प्रकट होने तक इन नमूनों का अवलोकन किया गया।

पाइरिप्रोक्सीफेन का मूल्यांकन (कीट विकास नियामक) (हल्द्वानी)

वर्ष 2003 में, पाइरिप्रोक्सीफेन (0.5%) के दानेदार मिश्रण का हल्द्वानी के चारों ओर पैदा हुए मलेरिया, फाइलेरिया, डेंगू और जे.ई. रोगवाहकों के विरूद्ध तीन विभिन्न खुराकों द्वारा परीक्षण किया गया। *क्युलैक्स* प्रजनन को बढ़ावा देते हुए उपचारित घरेलू गड्ढों से निकाले गए लार्वों से वयस्कों की उत्पत्ति की निरोधन क्षमता 0.01 पी पी एम की मात्रा पर 18.2-90%, 0.02 पी पी एम की मात्रा पर 49.2-100% एवं 0.05 पी पी एम पर 56.6-100% तक थी। उल्लेखित मच्छर प्रजातियों की उत्पत्ति निरोधन क्षमता (इनहिबिशन ऑफ एमरजेंस) प्रतिशत टैंकों में 0.02 पी पी एम की मात्रा में 48-100% तक बदलती रही। *एडीज* प्रजनन में वृद्धि करते हुए अनुप्रयुक्त टायरों में फँसे पानी और *एनॉफिलीज क्युलिसिफेसिज* प्रजनन को बढ़ाते

हुए नदी तल से भी समान परिणाम सामने आए। अलक्षित जीवों पर किसी भी हानिकर प्रभाव की रिपोर्ट नहीं मिली है।

सुमिलार्व (पाइरिप्रोक्सीफेन) 0.5 जी का मच्छर रोगवाहकों के लार्वो के विरुद्ध क्षेत्रीय मूल्यांकन (गुजरात)

विभिन्न गाँवों के अन्दर एवं बाहर स्थित निवास स्थानों पर सुमिलार्व 0.5 जी का मूल्यांकन किया गया; जैसे अपेय प्रयोजनों हेतु पाईप से आने वाले पानी को प्राप्त करते हुए घरेलू बर्तन इत्यादि। औद्योगिक संसाधन टैंकों में *एनॉ. स्टीफेन्सी* प्रजनन को 13 सप्ताह तक रोकने में दोनों ही खुराकें 0.01 एवं 0.1 पी पी एम प्रभावशाली रहीं। *क्यूलैक्स क्विनक्वेफेसिएट्स* की प्रचुर वृद्धि में सहायक दूषित पानी वाले तालाबों को भी विभिन्न गाँवों में 0.1, 0.25 और 0.5 कि.ग्रा./हे. की मात्रा पर उपचारित किया गया जिससे लार्वो एवं प्यूपों की अवस्थाओं में भारी गिरावट आई। घरेलू टैंकों में भी *एनॉ. स्टीफेन्सी* प्रजनन के प्रभाव का अध्ययन 0.01 और 0.1 मात्रा की खुराक देकर किया गया। पूर्ण रूप से देखा जाए तो 0.1 पी पी एम मात्रा को 0.01 की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली पाया गया। घरेलू टैंकों में *एडीज़ एजिप्टी* के पाँच सप्ताह तक किए गए परीक्षण के दौरान पाया गया कि अनुपचारित व उपचारित टैंकों में प्यूपों की उपस्थिति कम थी। ऐसा पाया गया कि लोग टैंक के पानी का प्रयोग कपड़े धोने हेतु इत्यादि कामों के लिए करके इसे पुनः भर देते हैं इसी कारणवश लार्वो की संख्या में 100% तक कमी नहीं हो पाई। निरीक्षण करके ज्ञात हुआ कि भिन्न-भिन्न मात्राओं पर जाँच करने से अलक्षित जीवों पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ा।

कीट विकास नियामक स्टैरीसाइड 480 एस सी (ट्राइफ्ल्युम्यूरॉन) की स्वच्छ और दूषित पानी में मच्छर लार्वा के विरुद्ध प्रभावकता

वातावरण के अनुकूल स्टेरीसाइड 480 एस सी (ट्राइफ्ल्युम्यूरो) नामक नए कीट विकास नियामक का काइटिन संश्लेषक अवरोधक की क्रिया के साथ दिल्ली और इसके पास के क्षेत्रों में व्याप्त मच्छर लार्वो के विरुद्ध प्रयोगशाला में और लघु क्षेत्रीय परीक्षण किए गए। इस मिश्रण को विभिन्न प्रजातियों के पिछले III अन्तरूप मच्छर लार्वे के विरुद्ध विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जैविक-कसौटी प्रणाली की सहायता से अपनी जैव-प्रभावकता के लिए प्रयोगशाला में जाँचा गया। *एनॉफिलीज़* और *क्यूलैक्स* मच्छरों के प्राकृतिक प्रजनन निवास स्थलों पर 0.3, 0.5 और 1 पी पी एम की मात्रा में इस मिश्रण का छिड़काव किया गया। इसके प्रभाव को डिपर द्वारा लार्वो की संख्या को मॉनीटर करके निर्धारित किया गया। प्रयोगशाला में उपरोक्त मिश्रण *क्यूलैक्स क्विनक्वेफेसिएट्स* की अपेक्षा *एनॉफिलीज़ स्टीफेन्सी* और *एडीज़ एजिप्टी* के लार्वो के विरुद्ध अधिक प्रभावशाली पाया गया, किन्तु 0.02 पी पी एम की मात्रा पर सभी मच्छर प्रजातियों के लिए व्यस्कों की उत्पत्ति में 100% रुकावट रही। जबकि क्षेत्रीय परीक्षण के दौरान, सबसे ज्यादा मात्रा 1 पी पी एम दिए जाने के उपरान्त भी लार्वे अवस्था के निर्माण में 100 प्रतिशत कमी नहीं आई। किन्तु 0.5 पी पी एम जैसी अल्प मात्रा पर भी *एनॉफिलीज़* एवं *क्यूलैक्स* प्यूपों की अवस्था में सभी निवास क्षेत्रों में 100% कमी आई। इस परीक्षण से यह प्रमाणित हो गया कि प्राकृतिक प्रजनन स्थलों में स्वच्छ या दूषित पानी, दोनों में ही ट्राइफ्ल्युम्यूरॉन के प्रयोग से तीन से सात माह के भीतर व्यस्क उत्पत्ति पूर्ण रूप से रुक जाती है। इसी मिश्रण का प्रयोग रोगवाहक नियन्त्रण कार्यक्रम के अन्तर्गत आगे भी बड़े क्षेत्रों में परीक्षण हेतु किया जा सकता है।

मच्छरों के डिंभकों को नष्ट करने में कीट विकास नियामकों की भूमिका

जैसे-जैसे मच्छरों से संबंधित जैविकी और विविधता की अधिक जानकारी प्राप्त होने लगी, मच्छरों को स्थायी अथवा अल्पस्थायी रूप से नष्ट करने हेतु नवीन पद्धतियों के विकास की आवश्यकता को महसूस किया जाने लगा। इसी दिशा में एक नई पहल तब हुई जब मेलाथियान नामक आर्गेनोफॉस्फेट कीटनाशक का प्रयोग व्यस्क मच्छरों

को मारने के लिए किया गया। मच्छरों को नियंत्रित करने की यह प्रणाली 1960 और 1970 के दशक में काफी लोकप्रिय रही और 1990 तक इसी प्रणाली में सुधार करते हुए अनुप्रयोग उपस्कर का स्थान फॉगर के बदले ऐरोजोल जनरेटर ने ले लिया। इन अति धीमी प्रबलता (यू.एल.वी.) जनरेटरों ने कीटनाशक की मात्रा को एक समान रूप से छोड़ते हुए मच्छरों की वयस्क अवस्था को प्रभावशाली ढंग से नियंत्रित किया। इसी क्रम में व्यापारिक नाम से प्रचलित द्रव्य डिंभकनाशी ऑलटोसिड (लार्वीसाइड ऑलटोसिड) यानि मेथोप्रीन का प्रयोग भी कीट विकास नियामक के रूप में किया जाने लगा। यह उत्पाद कीट के ही ज्यूविनाइल हार्मोन का तुल्यरूप है और यह मच्छर के डिंभक के लिए इतना घातक है कि मेथोप्रीन के संपर्क में आते ही चौथे अंतरूप (इनस्टार) के दौरान प्यूपे का रूप धारण करने से पूर्व ही मच्छर के डिंभक नष्ट हो जाते हैं। मच्छरों के डिंभक (लार्वे) प्यूपा बनने से पहले अपनी संपूर्ण डिंभक अवस्था में अन्य जीवों का भोजन बनते हैं और प्यूपा अवस्था में पहुँचकर ही उड़ने का प्रयास करते हैं। सामान्यतः प्यूपा अवस्था के दौरान कीट का दिमाग जूवइनाइल हार्मोन को उत्पन्न करता है जिससे वयस्क ऊत्तकों के निर्माण हेतु विभेदीकरण प्रक्रिया को शुरू करने के लिए काल्पनिक डिस्क ऊत्तक प्रेरित होते हैं। इसी विभेदीकरण प्रक्रिया के द्वारा कीट में प्रजनन अंगों, पंखों, विशेष प्रकार के चूसने एवं त्वचा को छेदने वाले मुंह के अंग और स्थलचारी पैरों का विकास होता है ताकि वयस्क अवस्था तक पहुँचा जा सके। कीटों में लार्वे विकास के चौथे चरण में मेथोप्रीन की उपस्थिति जूवइनाइल हार्मोन को दिमाग से उत्पन्न नहीं होने देती और जिससे वयस्क ऊतकों का विकास रुक जाता है। लार्वे से प्यूपा बनना आरंभ तो हो जाता है किन्तु विकास पूर्ण न होने के कारण मच्छर के लार्वे प्यूपा अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। इस तरह वयस्क मच्छर रोगवाहक का रूप धारण करने से पूर्व ही नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त वे अन्य अलक्षित जल जीवों पर कोई दुष्प्रभाव भी नहीं डालते हैं।

संक्षेप में, वर्तमान आई.जी.आर. यौगिकों का प्रयोग अधिक हो रहा है चूंकि ये मानव जाति एवं अन्य वन्य जीवन को किसी भी तरह की हानि नहीं पहुँचाते। इनका इस्तेमाल लार्वों के विरुद्ध लम्बे समय तक किया जा सकता है और ये मछली के लिए भी विषैले नहीं होते हैं।

❑

हाल ही में अमेजन घाटी के पेरू और ब्राजील में किए गए दो अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि मलेरिया संबंधी मामलों में वृद्धि ओर वनों की कटाई के बीच गहरा संबंध है जिसका प्रमाण यह है कि दक्षिणी अमेरिका में सीमान्त बस्तियों की स्थापना, कृषि विकास और सड़क निर्माण के लिए किए जाने वाले वनों के विनाश के कारण वहाँ मलेरिया फैलाने वाले प्रमुख रोगवाहक *एनॉफिलीज डारलिंगि* नामक मच्छर के प्रजनन में वृद्धि हुई है। यही कारण है कि सीमान्त बस्तियों की व्यवस्था करते समय स्वास्थ्य एवं कृषि क्षेत्रों में परस्पर सहयोग की आवश्कता पर जोर दिया गया है। साउथ केरोलिन यूनिवर्सिटी यू.एस. की टीम के प्रमुख का भी कहना है कि इसके लिए कृषि विस्तार के अवसर प्रभावशाली ढंग से प्रदान करना भी अति आवश्यक है।

प्रासंगिकी

संस्थान की गतिविधियाँ

सोनापुर (असम)

डॉ. वासदेव ने दिनांक 8 मार्च 2007 को 51 ए.एस.पी., डाइगारु में 'अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस' के उपलक्ष्य में वायु सेना कार्यकारिणी महिला संस्था द्वारा आयोजित समारोह में हिस्सा लिया। इस अवसर पर मलेरिया एवं इसकी रोकथाम (निवारण) विषय पर एक लोकप्रिय व्याख्यान भी प्रस्तुत किया जो मुख्य रूप से महिलाओं और बच्चों (आबादी का अति संवेदनशील हिस्सा) पर केंद्रित था।

असम के कोकराझार जिले की एम.एस.एफ. (गैर-सरकारी संगठन) के सदस्यों ने केन्द्र का दौरा किया और असम में मलेरिया की व्यापकता और औषधियों के प्रति संवेदन-शीलता की स्थिति पर अपने विचार प्रस्तुत किए।

क्षेत्रीय इकाई के हरदेव गुप्ता ने असम के कुछ चयनित जिलों में राज्य स्वास्थ्य विभाग के विचारार्थ हेतु राज्य मलेरिया सोसाइटी के अधीन उचित निधिकरण के लिए डी.डी.टी. स्प्रे प्रचालन के स्वतन्त्र निर्धारण हेतु प्रचालन अनुसंधान प्रस्ताव विकसित किया।

डॉ. वासदेव ने दिनांक 11 अप्रैल 2007 को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में एन.वी.बी.डी.सी.पी. द्वारा आयोजित 'उच्च महामारी वाले जिलों में फाल्सीपैरम मलेरिया' विषय पर हुई समीक्षा बैठक में हिस्सा लिया। बैठक में जिलाधीश के अलावा राज्य मलेरिया कार्यक्रम अधिकारी व प्रभावी क्षेत्रों के स्वास्थ्य सेवा विभागाधिकारी भी शामिल थे। संबंधित बैठक में मिजोरम में हुई 'चिकित्सीय प्रभावकता अन्वेषण' पर चर्चा की गई।

दिनांक 23 से 27 अप्रैल 2007 के वर्ल्ड विजन (गैर-सरकारी संगठन) के स्वयं-सेवकों हेतु प्रशिक्षण/प्रदर्शनी सह-कार्यशाला का आयोजन किया गया। उक्त कार्यशाला, में उत्तर-पूर्वी राज्यों के प्रभावित क्षेत्रों के लगभग 28 स्वयं-सेवकों ने हिस्सा लिया। इस कार्यशाला में मुख्य मुद्दा मलेरिया माइक्रोस्कोपी, जैविक-नियंत्रण हेतु, कीटनाशक संसिक्त मच्छरदानियों और लार्वाभक्षी मछलियों के प्रयोग से संबंधित जानकारी प्राप्त करना था। उक्त विषयों पर विचार-विमर्श करने के उद्देश्य से प्रासंगिक साहित्य भी उपलब्ध करवाया गया।

हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

डॉ. सी.पी. बत्रा और डॉ. बी.एन. नागपाल की अध्यक्षता में 15 प्रशिक्षार्थियों ने दिनांक 12 से 14 मार्च 2007 को क्षेत्रीय इकाई का दौरा किया। लार्वे और वयस्क मच्छरों का नमूनाकरण, मच्छरों की पहचान, औद्योगिक मलेरिया नियंत्रण और लार्वाभक्षी मछलियों के प्रयोग हेतु प्रशिक्षार्थियों के लिए क्षेत्रीय प्रदर्शन किए गए।

डॉ. ए.सी. पाण्डे और श्री एस.पी. सेठी, तकनीकी अधिकारी ने बी.एम.आर., पुणे अधिकारियों के साथ दिनांक 9 से 12 अप्रैल 2007 तक अजा नीम के क्षेत्रीय परीक्षण करने के उद्देश्य से आई.ओ.सी., मथुरा का दौरा किया।

डॉ. नीलिमा मिश्रा, वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी ने एन.आई.एम.आर., दिल्ली में दिनांक 14-15 मई 2007 को शारीरिक द्रव्यों में क्लोरोक्वीन संकेन्द्रण पर प्रशिक्षण प्राप्त किया।

श्री पाल, तकनीकी अधिकारी, एन.बी.एफ.जी., लखनऊ ने 3000 गप्पी मछलियाँ एकत्र करने हेतु दिनांक 14 मई 2007 को क्षेत्रीय इकाई का दौरा किया।

रायपुर (छत्तीसगढ़)

डॉ. जी.डी.पी. दत्ता, अनुसंधान अधिकारी और लैब तकनीशियन श्री बी.पी. सिंह, ने दिनांक 9 से 13 अप्रैल 2007 को रायपुर और दिनांक 17 से 23 अप्रैल 2007 को

जबलपुर में 'गर्भावस्था में मलेरिया' विषय पर प्रशिक्षण प्राप्त किया। इस प्रशिक्षण का आयोजन एन.आई.एम.आर., क्षेत्रीय इकाई, जबलपुर द्वारा किया गया। उन्हें आर.एम.आर.सी., जबलपुर में सिक्ल-सेल एनीमिया का पता लगाने और जी-6-पी.डी. की कमी पर भी विशेष प्रशिक्षण दिया गया।

डॉ. आर.एम. भट्ट ने दिनांक 17 मई 2007 को राज्य के विभिन्न जिलों में मलेरिया स्थिति की समीक्षा करने हेतु एन.एच.आर.एम., छत्तीसगढ़ के निदेशक द्वारा आयोजित सभी जिलों के मुख्य चिकित्सीय अधिकारियों हेतु बैठक में भाग लिया।

डॉ. आर.एम. भट्ट ने दिनांक 18 मई 2007 को एन.वी.बी.डी.सी.पी., दिल्ली के समक्ष प्रस्तुत होने वाली जिला सूक्ष्म कार्य योजना बनाने हेतु स्वास्थ्य सेवा निदेशक द्वारा आयोजित जिला मलेरिया अधिकारियों की बैठक में हिस्सा लिया।

डॉ. आर.सी. धीमान, डॉ. आर.एम. भट्ट, डॉ. एस.एन. शर्मा और डॉ. जी.डी.पी. दत्ता ने दिनांक 23 मई 2007 को छत्तीसगढ़ के सात स्थानिक महामारी वाले जिलों में *पी. फाल्सीपैरम* मलेरिया की समस्या और इसके नियंत्रण हेतु सूक्ष्म कार्य-योजना पर चर्चा के उद्देश्य से श्री दीपक गुप्ता, सहायक सचिव (स्वास्थ्य), भारत सरकार की अध्यक्षता में आयोजित बैठक में भाग लिया। एन.वी.बी.डी.सी.पी. के निदेशक द्वारा राज्य की मलेरिया स्थिति की समीक्षा की गई। बैठक की अध्यक्षता स्वास्थ्य सचिव, छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा की गई और इसमें निदेशक (स्वास्थ्य सेवा) और सात जिलों के जिलाधीश, मुख्य चिकित्सा अधिकारी और जिला मलेरिया अधिकारी के अतिरिक्त राज्य के अन्य वरिष्ठ स्वास्थ्य अधिकारियों ने भाग लिया। डॉ. धीमान और श्री आर.एम. भट्ट ने चर्चा के दौरान विभिन्न मुद्दों पर अपने विचार प्रकट किए। एन.आई.एम.आर., क्षेत्रीय इकाई को अवर सचिव द्वारा राज्य में शुरू की गई विभिन्न मलेरियारोधी गतिविधियों की निगरानी करने के निर्देश दिए गए।

जबलपुर (मध्य प्रदेश)

डॉ. नीरू सिंह ने दिनांक 1 मार्च 2007 को जबलपुर में आर.एम.आर.सी.टी. के संस्थापन दिवस पर हुए एक समारोह का आयोजन किया।

डॉ. नीरू सिंह ने दिनांक 7 से 9 मार्च 2007 को "भारत (छत्तीसगढ़) में गर्भावस्था में मलेरिया समस्या" विषय पर हुई परियोजना के संबंध में छत्तीसगढ़ राज्य स्वास्थ्य अधिकारियों के साथ हुई बैठक में हिस्सा लिया।

एन.आई.एम.आर., क्षेत्रीय इकाई, जबलपुर में दिनांक 8 से 10 मार्च 2007 को मध्य प्रदेश के भिन्न जिलों के चिकित्सीय अधिकारियों हेतु मलेरिया संबंधी प्रशिक्षण कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला का संचालन संयुक्त रूप से एन.आई.एम.आर. क्षेत्रीय इकाई, जबलपुर और रोगवाहक रोग नियंत्रण कार्यक्रम (एन.वी.बी.डी.सी.पी.) के अधीन स्वास्थ्य सेवा निदेशालय द्वारा आगे बढ़ाया गया।

डॉ. नीरू सिंह ने दिनांक 10 से 11 मार्च 2007 तक जे.आर.डी. टाटा आडिटोरियम, राष्ट्रीय उच्च अध्ययन संस्थान (एन.आई.ए.एस.) में 'वायरस एवं रोगवाहक' पर हुए सत्र की अध्यक्षता करते हुए उष्णकटिबंधीय रोगों पर अनुसंधान हेतु निर्मित सर दोराबजी टाटा सेन्टर द्वारा आयोजित आठवीं सर दोराबजी टाटा परिसंवाद में भाग लिया।

डॉ. नीरू सिंह ने दिनांक 12 से 13 मार्च 2007 को "पूर्वी भारत (झारखण्ड) में गर्भावस्था के दौरान मलेरिया समस्या का आँकलन" नामक परियोजना के संबंध में राँची का दौरा किया।

डॉ. नीरू सिंह ने दिनांक 19 से 20 मार्च 2007 को दिल्ली में उपस्कर सीमिति पर आयोजित बैठक में भाग लिया।

डॉ. नीरू सिंह ने दिनांक 24 मार्च 2007 को आर.एम.आर.सी.टी., जबलपुर में विभागीय आयुक्त,

जबलपुर और राजस्व और वन विभाग के वरिष्ठ अधिकारियों के साथ जैवविविधता संकेन्द्रण प्रतियोगिता पुरस्कार के संबंध में हुई बैठक में हिस्सा लिया। आर.एम.आर.सी.टी. ने इस प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त किया।

डॉ. नीरू सिंह ने दिनांक 1 से 4 अप्रैल 2007 तक "पूर्वी भारत (झारखण्ड) में गर्भावस्था के दौरान मलेरिया समस्या का आँकलन" नामक परियोजना के संबंध में दिल्ली का दौरा किया।

डॉ. नीरू सिंह ने दिनांक 8 से 11 अप्रैल 2007 को "भारत (छत्तीसगढ़) में गर्भावस्था में मलेरिया समस्या" नामक परियोजना के अधीन स्टाफ प्रशिक्षण के संबंद्ध में रायपुर का दौरा किया।

नडियाड (गुजरात)

डॉ. एच.सी. श्रीवास्तव ने गुजरात राज्य के गाँधी नगर में कीटनाशक अवशिष्ट छिड़काव एवं कीटनाशक संसिक्त मच्छरदानियां प्रयुक्त करने वाली समीक्षा बैठक में भाग लिया।

डॉ. आर.एस. यादव ने दिनांक 10 अप्रैल 2007 को एस.आई.एच.एफ.डब्ल्यु., अहमदाबाद में मलेरिया महामारी विज्ञान और प्रबंधन पर हुई कार्यशाला में भाग लिया।

एफ.डी.ए. द्वारा मलेरिया हेतु रेपिड टेस्ट को स्वीकृति

खाद्य एवं औषध प्रशासन द्वारा अपनी तरह के पहले इनवरनेस, मेडीकल इनोवेशन्स इनकॉरपोरेशन मलेरिया टेस्ट को संयुक्त राष्ट्र संघ में स्वीकृति दे दी गई है। केवल प्रयोगशाला में किए जाने वाला परीक्षण, बाइनेक्स नाओ मात्र पन्द्रह मिनट के भीतर ही रक्त नमूने में से मलेरिया की उपस्थिति को खोज निकालता है। वर्तमान समय में प्रयुक्त परीक्षण के लिए स्वास्थ्य व्यवसायिकों की आवश्यकता पड़ती है जो सूक्ष्मदर्शी द्वारा मलेरिया परजीवियों का पता लगा सकें। मलेरिया एक मच्छरजनित रोग है जो सही उपचार न मिलने से जानलेवा भी हो सकता है। एफ.डी.ए. डीवाइस सेन्टर के निदेशक डेनिबल शहल्ट्ज ने कहा "चूंकि मलेरिया संयुक्त राष्ट्र संघ में असामान्य है, चिकित्सक और प्रयोगशाला कार्मिक इस रोग के निदान में अभ्यस्त नहीं हैं"। इसलिए बाइनेक्स परीक्षण के परिणामों की किसी स्वास्थ्य व्यवसायी द्वारा पुष्टि आवश्यक है किन्तु कम्पनी अध्ययन दर्शाते हैं कि परीक्षण ने 95 प्रतिशत मामलों में सही ढंग से मलेरिया परजीवी का पता लगाया है।

एसोसिएटेड प्रैस
27 जून 2007 से उद्धत

मलेरिया संबंधी देश-विदेश के समाचार

भारतीय 'आर्टिमीसिया' से होगा मलेरिया का निदान

कानपुर, शिक्षा संवाददाता। भारत औषधीय पौधों का भंडार है। पूरे देश में 15 हजार से अधिक प्रजातियां हैं जिनमें औषधीय गुण या सुगंध वाला तेल मौजूद है। आने वाले समय में 'आर्टिमीसिया' पौधे से मलेरिया का निदान हो सकेगा।

उक्त विचार चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के प्रसार निदेशालय में 'औषधीय पौधों की खेती' पर मंगलवार से शुरू हुई राष्ट्रीय कार्यशाला में सीमैप के निदेशक डॉ. एस.पी. खनूजा ने व्यक्त किए। उन्होंने कहा मेंथा में उत्तर प्रदेश का उच्च स्थान है। औषधीय पौधों का जीवन महात्माओं जैसा होता है जो निरंतर हमारी सेवा करते हैं। आई.पी.एन.आई., गुड़गांव के निदेशक डॉ. के.एन. तिवारी ने कहा कि किसानों को आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए औषधीय व सुगंधीय पौधों की खेती में उतरना चाहिए। कुलपति प्रो. वी.के. सूरी ने कहा कि औषधीय व सुगंधीय पौधों के कच्चे माल से निर्मित दवाओं की मांग व आपूर्ति में भारी अंतर है। किसान इसका लाभ उठा सकते हैं। भारत में वर्तमान में 550 करोड़ रुपए का व्यापार है। निदेशक शोध डॉ. आर.पी. कटियार ने आंवला, बेर, सफेद मूसली, अश्वगंधा, स्टीविया, लेमनग्रास की खेती के बारे में जानकारियां दी। कार्यशाला में डॉ. बीना गुप्ता (आई.बी.पी.जी.आर., नई दिल्ली) व डॉ. सी.एस. राघव (निदेशक, एफ.एफ.डी.सी., कन्नौज) ने शोध-पत्रों से औषधीय, पौधों के उत्पादन की तकनीक बताई। औषधीय पौधों की वाटिका सजाई गई व उनके पोस्टर लगाए गए। स्वागत निदेशक (प्रसार) डॉ. वी.के. सिंह ने किया। डॉ. मुनीश गंगवार, डॉ. आर.ए. सिंह, डॉ. वी.के. कनौजिया और डॉ. शंकर सिंह भी कार्यशाला में भागीदार थे।

अमर उजाला, कानपुर
दिनांक 12 मार्च 2007 से उद्धृत

आनुवांशिक रूप से तैयार मच्छर देंगे मलेरिया सुरक्षा

बैंगलौर। अमेरिका स्थित जॉन हॉपकिंस विश्व विद्यालय के वैज्ञानिकों ने पिछले सप्ताह घोषणा की है कि उन्होंने मच्छरों की एक ऐसी प्रजाति विकसित की है, जिसमें मलेरिया के परजीवियों से लड़ने की प्रतिरोधक क्षमता मौजूद है।

लेकिन अमेरिकी वैज्ञानिकों के इस दावे पर भारतीय वैज्ञानिकों को भरोसा नहीं है। भारत के सार्वजनिक स्वास्थ्य मामलों के जानकारों का मानना है कि अमेरिकी वैज्ञानिकों ने मलेरिया से लड़ने के लिए मच्छरों की जिस प्रजाति को विकसित किया है, वह प्रयोग भारत में पहले ही किया जा चुका है और असफल होने के चलते इसे बीच में ही रोक दिया गया था। आई.ए.एन.एस. से बातचीत करते हुए नेशनल वेक्टर बॉर्न डिजीज कंट्रोल प्रोग्राम के निदेशक डॉ. पी.एल. जोशी ने कहा कि 70 के दशक में भारत में इस तरह के प्रयोग किए गए थे लेकिन असफल होने के कारण इन्हें बीच में ही छोड़ना पड़ा।

अमेरिकी वैज्ञानिकों के प्रयोग से यह बात सामने आई है कि आनुवांशिक रूप से परिष्कृत मच्छरों की उम्र ज्यादा होती है और वे ज्यादा प्रजनन करने में भी सक्षम होते हैं। इसी निष्कर्ष पर आधारित तकनीक के बारे में बताते हुए अमेरिकी वैज्ञानिकों का कहना है कि आनुवांशिक रूप से परिष्कृत मच्छरों को जंगल में छोड़ दिया जाएगा।

इसके बाद तकनीकी सेवा के भीतर ये मच्छर उन मच्छरों को समाप्त कर देंगे, जो मलेरिया फैलाते हैं। उन्होंने कहा

कि आनुवांशिक रूप से परिष्कृत मच्छरों को जंगल में छोड़ने की योजना में अफ्रीका में पांच साल लग गए जबकि भारत में 30 साल पहले इस तरह का प्रयोग किया गया था जो असफल साबित हुआ था। गौरतलब है कि भारत में 1975 में हरियाणा के सोनीपत जिले में आनुवांशिक रूप से परिष्कृत मच्छरों को छोड़ा गया था। इस परियोजना को अमेरिका द्वारा वित्तीय सहायता प्रदान करवाई गई थी।

वीर अर्जुन, नई दिल्ली

दिनांक 26 मार्च 2007 से उद्धृत

अब जापानी पत्थर मारेंगे नालों के मच्छर

वार्ता, नई दिल्ली, जल शोधन करने वाले जापानी चमत्कारी पत्थर अब अपने देश में भी जल दूषित करने वाले कीटाणुओं से लोहा लेंगे। नदी नालों के गंदे पानी और कल-कारखानों के कचरों को साफ करने में कई देशों में कारगर साबित होने वाले इन पत्थरों को अपने देश में भी आजमाया गया है और इन्हें उपयोगी पाया गया है।

इन पत्थरों को इको-बायो-ब्लैक ई.बी.बी. नाम दिया गया है। केन्द्रीय प्रदूषण बोर्ड (सी.पी.सी.बी.) के सहयोग से यहां के मयूर विहार के खुले नाले में इन पत्थरों का परीक्षण पिछले दिनों पूरा हुआ।

इन पत्थरों को भारत में उपलब्ध कराने वाली कंपनी एरिएक बायोटेक साल्युशंस प्राइवेट लिमिटेड के मुख्य कार्यकारी अधिकारी श्री ए. अहमद शाह तथा निदेशक श्री पी. राममूर्ति ने बताया कि इस परीक्षण के नतीजे काफी उत्साहवर्द्धक रहे हैं। यह परीक्षण गत वर्ष दिसंबर में शुरू हुआ था। इससे पूर्व इन पत्थरों का परीक्षण सी.पी.सी.बी. की प्रयोगशाला में भी किया जा चुका है। श्री शाह के अनुसार ये पत्थर नदी नाले के गंदे पानी से कार्बनिक प्रदूषण तथा उनसे निकलने वाली बदबू को दूर करने के अलावा मच्छरों के लार्वो को मारने में भी काफी कारगर हैं।

ये पत्थर ज्वालामुखी से निकलने वाले छिद्रदार पत्थरों और अल्कलाइन सीमेंट की लेप में कुछ खास सूक्ष्म जीवाणुओं को मिलाकर विभिन्न आकारों में ब्लाक रूप में ढाले जाते हैं। ये सूक्ष्म जीवाणु अंकुरित सोयाबीन से निकाले जाते हैं। इन ब्लाकों को अगर गंदे पानी में रख दिया जाए तो ये कई वर्षों तक जल को दूषित करने वाले और बदबू पैदा करने वाले जीवाणुओं को नष्ट करते रहते हैं। ये ब्लाक जरूरत के अनुसार अलग-अलग आकारों में ढाले जाते हैं। श्री राममूर्ति के अनुसार इन ब्लाकों के जरिए प्रदूषित जल को शोधित करने की प्रक्रिया पूरी तरह प्राकृतिक है। ये ब्लाक गंदे पानी को शोधित करने की प्रकृति की क्षमता का इस्तेमाल करते हैं। अभी तक इन पत्थरों का इस्तेमाल केवल उष्ण-कटिबंधीय देशों में होता था। लेकिन अब इन पत्थरों का इस्तेमाल संयुक्त अरब अमीरात एवं अरब देशों में भी होने लगा है।

इन ब्लाकों को बनाने के लिए ज्वालामुखी पत्थरों का इस्तेमाल इसलिए किया जाता है क्योंकि इनमें सूक्ष्म जीवाणु तेजी से बढ़ते हैं। ये सूक्ष्म जीवाणु जल में पलने-बढ़ने वाले उपयोगी जीवों एवं पौधों को नुकसान पहुंचाए बगैर मच्छरों के लार्वो और *ई. कोली* जीवाणु जैसे हानिकारक जीवाणुओं को नष्ट करते हैं।

महामेधा, नई दिल्ली

दिनांक 18 अप्रैल 2007 से उद्धृत

मलेरिया हेतु भारत के मुख्य अणु को यू.एस. पेटेंट

राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोआ के वैज्ञानिकों ने राष्ट्रीय कोशिका विज्ञान केन्द्र, पुणे एवं अन्तरराष्ट्रीय जेनेटिक इंजीनियरिंग और बायोटक्नोलोजी के अनुसंधानकर्त्ताओं के सहयोग द्वारा मसल (Mussel) से दो मलेरियारोधी अणुओं को पृथक किया गया है और इन अणुओं को परम्परागत औषधियों के साथ प्रयोग किए जाने की संभावना है।

इन अणुओं के पूर्व-नैदानिक विषाक्तता संबंधी अध्ययनों से पता चला है कि मसल से निकाले गए अणुओं का कोई गौण प्रभाव नहीं है। इनके चिकित्सीय परीक्षण दो माह में

शुरू किए जाएंगे।

वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सी.एस.आई.आर) को मलेरिया उपचार हेतु मसल (Mussel) से दो बढ़िया यौगिक एन.आई.ओ.-1 एवं एन.आई.ओ.-2 को खोज निकालने के उद्देश्य से यू.एस. पेटेंट निर्दिष्ट किया गया है। यह खोज राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान (एन.आई.ओ) गोआ-सी.एस.आई.आर, संस्थान के वैज्ञानिक डॉ. अनिल चटर्जी द्वारा राष्ट्रीय कोशिका विज्ञान केन्द्र, पुणे (एन.सी.सी.एस.) एवं इण्टरनेशनल सेंटर फॉर जेनेटिक इंजीनियरिंग एण्ड बायोटेक्नोलॉजी (आई.सी.जी.ई.बी), नई दिल्ली के अनुसंधानकर्त्ताओं के साथ मिलकर की गई है।

मलेरिया एक मुख्य उष्ण-कटिबंधीय परजीवी रोग है। तपेदिक को छोड़कर किसी भी अन्य संचारी रोग की अपेक्षा मलेरिया सबसे अधिक लोगों की मृत्यु का कारण बनता है। विकासशील देशों, विशेष रूप से अफ्रीका में मलेरिया के कारणवश कई लोग काल का ग्रास बने हैं और साथ ही इस रोग से गंभीर आर्थिक और चिकित्सीय क्षति होती है। मनुष्य में इस रोग को उत्पन्न करने वाले मच्छरों द्वारा जनित एकल-कोशिकीय परजीवी की चार प्रजातियाँ मुख्य रूप से शामिल हैं। इनमें से *पी. फाल्सीपैरम* घातक संक्रमणों के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार है। अब परजीवी के बहु-औषध प्रतिरोधी स्ट्रेनों के उत्पन्न होने से स्थिति को गंभीरता से देखा जा रहा है चूंकि तजाकिस्तान और असेब्रेआज़ान के केन्द्रीय एशियन रिपब्लिक और कोरिया इत्यादि क्षेत्रों जहाँ पहले मलेरिया नियन्त्रण में था या पूर्ण रूप से उन्मूलित हो चुका था, पुनः उत्पन्न हो गया है।

बायोस्पेक्ट्रम

दिनांक 11 अप्रैल 2007 से उद्धृत

लक्ष्मीतरु पौधे से दूर भागेंगे मलेरिया के मच्छर

सोनभद्र। मलेरिया का जानी दुश्मन पौधा सोनांचल की धरती पर उग आया है। लक्ष्मीतरु के नाम से जाना जाने वाला पौधा मलेरिया से निजात दिलाने के लिए कारगर साबित होगा। वनस्पति विशेषज्ञों का दावा है कि घर-आंगन के पास जहां इस पौधे को लगाया जाएगा, वहां मलेरिया के मच्छर दूर-दूर तक नहीं फटकेंगे। वनस्पति विशेषज्ञों की मानें तो पौधे के प्रभाव वाले इलाके में प्रवेश करते ही मच्छरों का दम घुट जाएगा। वातावरण को शुद्ध बनाने में भी पौधे की अहम भूमिका होगी।

दुनिया में समरसता के लिए काम करने वाली संस्था आर्ट आफ लिविंग ने इस पौधे को प्रमोट करने का बीड़ा उठाया है। इस पौधे का हर अंग उपयोगी साबित हो सकता है। बैंगलौर इंस्टीट्यूट आफ एग्रीकल्चर साइंसेज के शोध के मुताबिक लक्ष्मीतरु का तेल खाने के काम तो आएगा ही इसकी मेडिसिन वैल्यू भी होगी। पौध लगने के छह से आठ साल में फल मिलने लगेगा। इसकी खासियत है कि किसी भी जलवायु में रोपा जा सकता है। कम वर्षा वाले इलाकों में भी इस पौधे को रोपा जाना संभव है।

अमर उजाला, दिल्ली

दिनांक 17 जून 2007 से उद्धृत

समाचारपत्रों के पंजीकरण (केन्द्रीय) नियम 1965 के नियम 8 के अन्तर्गत अपेक्षित
'*मलेरिया पत्रिका*' के स्वामित्व तथा अन्य मुद्दों से संबंधित विवरण

प्रकाशन का स्थान	:	राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान 22 शाम नाथ मार्ग दिल्ली-110 054
प्रकाशन की अवधि	:	त्रैमासिक (मार्च, जून, सितम्बर व दिसम्बर)
मुद्रक का नाम	:	प्रोफेसर आदित्य प्रसाद दाश
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान 22 शाम नाथ मार्ग दिल्ली-110 054
प्रकाशक का नाम	:	प्रोफेसर आदित्य प्रसाद दाश
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	उपर्युक्त
सम्पादक का नाम	:	प्रोफेसर आदित्य प्रसाद दाश
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	उपर्युक्त

मैं, आदित्य प्रसाद दाश यह घोषणा करता हूँ कि ऊपर दिए गए तथ्य मेरी जानकारी एवं विश्वास के अनुसार सत्य हैं।

ह./-
आदित्य प्रसाद दाश
(प्रकाशक)

29 जून 2007

प्लाज़्मोडियम है किसका नाम ?

सुनाता हूँ सबको यह बात
समझना धरना अपने पास।
अनिश्चित है इसका आकार
रोक लो, सपना करो साकार॥

पाँच सौ मिलियन तक हर वर्ष
विश्व में होते हैं बीमार।
वक्त पर न जो चेता यार
मौत से हो जाता दो चार॥

प्लाज़्मोडियम है जिसका नाम
मच्छरों से इसकी पहचान।
इसी का रोक इसी की थाम
मलेरिया है जिसका परिणाम॥

आज हम बैठे यहां ललाम
बात हो, चर्चा हो हर आम।
समस्या लोग न जाने बात
विकट होता इसका अंजाम॥

शोधरत होता-बढ़ता ज्ञान
डीएनए की सिक्वेन्सिग आन।
मेरा अपना है यह अनुमान
ज्ञान का हो सटीक अभियान॥

डॉ. आलोक सुमन शर्मा, एस आर एफ
राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान, दिल्ली

पंजीयन संख्या 57151/93

राष्ट्र के स्वास्थ्य को बचाने की है चाह,
मलेरिया नियंत्रण की हमने पकड़ी है राह।
मंजिल की ओर बढ़ रहे हैं हमारे कदम,
मलेरिया प्रकोप से अछूता होगा जन-जन ।।

सेवा में

प्रेषक
राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान
20, मधुबन
विकास मार्ग
दिल्ली-110 092

राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान, दिल्ली की ओर से प्रो. आदित्य प्रसाद दाश द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित तथा मैसर्स रॉयल आफसैट प्रिंटर्स, ए-89/1, नारायणा इण्डस्ट्रियल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110 028 से मुद्रण कर राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान, 22 शाम नाथ मार्ग, दिल्ली-110 054 से प्रकाशित।
सम्पादक : प्रो. आदित्य प्रसाद दाश